Sudarshan Research Journal
Volume – 1, Issue - 7, November-2023
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

आजीवन ब्रह्मचार्य और बिश्नोई धर्म : गुरु जांभोजी

Dr. Suman Bala

Former Research Scholar, Guru Jambheshwar University of Science and Technology, Hisar, Haryana

I. शोध सारांश

गुरु जांभोजी वैदिक शक्ति सम्पन्न, ईश्वरीय स्वरूप, महिमावान, योगी और विष्णु स्वरूप थे। वे इस धरती पर लोगों के उद्दार के लिए आए। उन्होंने अपने प्रभावशाली व्यक्तित्व के द्वारा न केवल साधारण जनता को अपितु बड़े-बड़े राजाओं और साधू सन्यासियों को भी प्रभावित किया। उन्होंने कभी भी उंच-नीच, जात-पात, वर्ण, वर्ग आदि के भेदभाव को कोई महत्व नहीं दिया। वे सभी व्यक्तियों को समान भाव से देखते थे। वे आजीवन ब्राह्मचर्य रहे और उन्होंने अपना सम्पूर्ण जीवन लोगों की सेवा में ही समर्पित कर दिया । गुरु जांभोजी महान व्यक्तित्व वाले अलौकिक पुरुष थे ।

बाल्यावस्था में जंगल में रहते हुए जांभोजी को एकान्त साधना का पर्याप्त समय मिलता। पशु-पक्षियों और मनुष्यों की सेवा संबंधी लगे सताईस सालों में उन्होंने आत्म साधना और परोपकार भी किए। जांभोजी के माता-पिता ने एक बार उनसे विवाह करने का आग्रह किया परंतु जांभोजी ने विवाह की बात सुनते ही माता-पिता को आजीवन ब्रह्मचारी रहने का निश्चय बता दिया। माता-पिता ने कई बार आग्रह किया, परंतु उनके दृढ़ संकल्प को देख वे भी मान गए।(1) अत: वे आजीवन ब्रह्मचारी रहे। गुरु जांभोजी के चरित्र की एक विशेषता हमें यह भी देखने को मिलती है कि जीतने समय तक उनके माता-पिता जीवित रहे, वे उनको छोड़कर नही गए संवत 1540 के चैत सुदि नवमी को लोहट जी का तथा इसके पाँच मास पश्चात इसी संवत में भादों की पुर्णिमा को माता हांसा जी का स्वर्गवास हुआ। उनके स्वर्गवास के बाद ही उन्होंने घर का त्याग किया।(2) मध्यकालीन संतों के जीवन चरित्र पर दृष्टि डालने पर पता चलता है कि अनेक संतों ने अपने माता-पिता को छोड़ दिया था व सन्यास लेकर वन में चले गए। किन्तु जांभोजी ने अपने पुत्र धर्म का पालन पूरी तरह से निभाया।

गुरु जांभोजी जन्मजात योगी और सिद्ध पुरुष थे। वे इस धरती पर लोगों के उद्धार्थ आए थे, ऐसी स्थिति में विवाह बंधन में कैसे बंध सकते थे। उनका मार्ग परमार्थ का मार्ग था जिसके वे पथिक थे। उन्हे तो ऐसे तख्त की रचना करनी थी जिसके शासन में धर्म, समता और सदाचार की प्रधानता हो। उनका धरती पर आगमन ही

Sudarshan Research Journal
Volume – 1, Issue - 7, November-2023
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

इसी उद्देश्य से हुआ था| उनकी वाणी में इस ओर संकेत हुआ है-

मा जाणै मेरे बहुटल आवै बाजै विरद बधाई

म्हे शंभु का फरमाया, बैठा तखत रचाई|[3]

उसके बाद जांभोजी अपनी सारी संपति का त्याग कर संभराथल पर रहने लगे और यहीं रहते हुए चौंतीस वर्ष की आयु में वि. संवत 1542 ई. की कार्तिक वदी अष्टमी को बिश्नोई संप्रदाय की स्थापना की|[4] उनकी आकृति अत्यंत शोभायुक्त थी| उनके माथे पर जटा मुकुट और सिर पर भगवा रंग की टोपी, कुर्ता व हाथ में माला सुशोभित थी | बिश्नोई संप्रदाय में उन्हे साक्षात विष्णु का अवतार माना जाता है |[5] उन्होंने स्वयं अपने अवतार लेने के कारण को बताया है| वे कहते हैं कि मैं सद्गुरु रूप में मरुस्थल पर आया हूँ इससे पहले मेरे नौ अवतार हो चुके हैं| 'नव अवतार नमो नारायण तेपण रूप हमारा थिन्यू'|[6] डॉ. हीरालाल माहेश्वरी ने उन्हे जीवनमुक्त[7] पुरुष कहा है| जीवन मुक्त के लक्षण बताते हुए धर्मेन्द्र अभिनंदन ग्रंथ में लिखा है- जीवनमुक्त पुरुष लोकधर्म से उपर उठ जाता है| वह शारीरिक आवश्यकताओं से मुक्त हो जाता है| उनके शरीर का धर्म लुप्त होकर शुद्द-बुद्द आत्मा का धर्म शेष रह जाता है वे पुरुष शरीर धर्मी न रह कर आत्मधर्मी हो जाते हैं| ऐसी स्थिति में काम, क्रोध, मोह की तो बात ही क्या वे भूख प्यास जैसे शारीरिक आवश्यकताओं आदि से भी मुक्त हो जाते हैं|[8]

गुरु जांभोजी का अवतार मनुष्यों के कल्याणार्थ हेतु ही हुआ | संप्रदाय के विभिन्न कवियों ने उनके अलौकिक रूप का वर्णन किया है - 'सबदवाणी' और कवियों के साहित्य से पता चलता है कि वे धरती पर कभी पीठ नहीं लगाते थे, और न ही उनकी पीठ किसी को दिखाई देती थी | सभी व्यक्तियों को चारों तरफ उनका मुस्कुराता चेहरा ही नजर आता था | उनके शरीर से सैदव परिमल सुगन्ध आती रहती| उनकी न तो छाया पड़ती और न ही पैरों के निशान ही होते | इस प्रकार से वे एक अलौकिक पुरुष थे|(9) खाने-पीने के प्रति रुचि न होना, सामान्य लोक-व्यवहार से भिन्न व्यवहार और रीति-रिवाज या नीति का अनुसरण करना, शारीरिक जरूरतों के प्रति लापरवाह होना जीवनमुक्त पुरुष के सामान्य लक्षण हैं | जीवन मुक्त पुरुष लोकधर्म से ऊपर उठकर शारीरिक आवश्यकता से मुक्त हो जाते हैं और इस प्रकार शरीर धर्मी न रहकर आत्मधर्मी हो जाते हैं| जांभवाणी साहित्य के अनुसार किसी को उनकी पीठ नहीं दिखाई देती थी | सब और उनका मुस्कराता हुआ प्रसन्न मुख ही दिखाई देता था| वे आजन्म ब्रह्मचारी रहे तथा अत्यंत मित और मिष्टभाषी थे| 'सबदवाणी' के तरेसठवें सबद में बड़े विस्तार से उनकी इन अलौकिक और विलक्षण विशेषताओं का बार-बार विवरण दिया है|

इन सभी कथनों का विवेचन करने से पता चलता है कि वे धर्मोद्दारक, दूरदर्शी एवं अलौकिक शक्ति सम्पन्न थे| उन्होंने अपनी वाणी में एसे तत्वों का समावेश किया जो प्रत्येक मनुष्य के लिए आदरणीय है | अपने

Sudarshan Research Journal
Volume – 1, Issue - 7, November-2023
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

इस अलौकिक व्यक्तित्व के कारण ही मध्यकालीन सन्त महात्माओं में उनका पृथक स्थान है|

II. बिश्नोई धर्म की स्थापना

गुरु जांभोजी अपने माता-पिता की मृत्यु के पश्चात घर का त्याग कर संभराथल पर रहने लगे| संवत 1542 में राजस्थान में भीषण अकाल पड़ा था|(10)

इससे पूर्व वे सभराथल पर रहने लगे थे| जिसका उल्लेख वील्होजी ने किया है -

'समंत कहावे पनरासयौ, कुसुमु सबल बयालेंपयौ|
जीवा जुणी संताई भूष, गउवा मिनषा इधकों दुष||(11)

अकाल पड़ने के कारण अन्न धन की काफी कमी हो गयी जिसके कारण लोग गांवो से पलायन करने लगे| इस संकट काल में संभराथल पर रहते हुए गुरु जांभोजी ने अन्न-धन आदि देकर अकाल पीड़ितों, पशुओं आदि की बहुत सहायता की थी|(12)

संवत 1542 में ही गुरु जांभोजी ने कार्तिक बदी अष्टमी को संभराथल पर, स्नान कर हाथ में माला और मुख से जप करते हुए कलश स्थापना कर बिश्नोई संप्रदाय की स्थापना की और लोगो को ज्ञानोपदेश दिया -

'करिमाला मुख जाप करी, सोह मेटियो कुथान|
पहली कलस प्राठियौ, सइय ब्रहमाण्ड सिनान||(13)

लोगों को बिश्नोई बनाने का क्रम इस अष्टमी से अमावस्या तक निरंतर चलता रहा|(14)

आदि अष्टमी अंत अमावस|
चार वरण कू किया तपावस||(15)

इस विशाल समारोह में केवल जांभोजी के अनेक अनुयायी ही नही 'राजा-महाराजा भी आये थे| जांभोजी ने इस मत का नाम 'बिश्नोई पंथ' रखा|(16) बिश्नोई संप्रदाय के कवियों ने इस पंथ को अनेक नामों से पुकारा है| जैसे- गुरुवाट, सतपंथ, मुक्तिखेत, अगमपंथ, सहज पंथ, विसनपंथ, (17) विष्णु पंथ आदि| गुरु जांभोजी द्वारा प्रवर्तित होने के कारण इसे 'जाभाणी पंथ' भी कहा जाता है| बिश्नोई भक्त प्रहलाद को बहुत मानते हैं क्यूंकि प्रहलाद भी भगवान विष्णु का उपासक था इसलिए इसे 'प्रहलाद पंथ' भी कहा जाता है| उन्होंने सर्व प्रथम पंथ-स्थापना के प्रतीक रूप में कलश की स्थापना की और मंत्र का जाप करवाया|

कलश की स्थापना एवं यज्ञ करने के उपरान्त जांभोजी ने जल को अभिमंत्रित कर 'पाहल'(18) बनाया था और इसी पवित्र 'पाहल' को पिलाकर सभी वर्णों के लोगों को बिश्नोई पंथ में दीक्षित किया|

ताहि समें कलश इक आयेऊ|
वसत्र ढाँप सत मंत्र जपायेऊ||(19)

Sudarshan Research Journal
Volume – 1, Issue - 7, November-2023
ISSN No: 2583-8792
Impact Factor: 3.179 (SJIF)

सम्प्रदाय में दीक्षित होने वाले प्रथम व्यक्ति जांभोजी के चाचा पुल्होजी थे।[20] पूल्होजी जांभोजी के प्रति शंकालु थे। सम्प्रदाय में दीक्षित होने से पहले उन्होंने जांभोजी से कहा मैं आपका सम्बन्धी हूँ, किन्तु फिर भी बिना किसी 'पर्चे' (चमत्कार) के मुझे विश्वास नहीं होता -

'परचै विनया पिछानणी, गुर परचै परचाय
म्हे संबंधी शाखमा, चरण गहयों हम आय।'[21]

जांभोजी ने पूल्होजी को परचा दिखाना स्वीकार कर लिया पर साथ ही यह वचन लिया कि 'परचा' मिलने पर उनके द्वारा बताए गए मार्ग पर चलना होगा।

प्रह्लाद की प्रीत सूं, जाग्यों पूर्व अंक।
पुल्है की प्रीत सूं, चाल्यों पंथ निशंक।।[22]

इस प्रकार अलौकिक परचा पाकर पुल्होजी के दीक्षित होने के बाद पंथ निशंक भाव से चल पड़ा।

जांभोजी के महिमान्वित व्यक्तित्व, उनकी परोपकारी वृति तथा उनके ज्ञानोपदेश का लोगों पर जादुई असर था। वे लोगों की समस्याओं और शंकाओं का समाधान बड़े ही प्रभावशाली ढंग से करते थे। लोग बडी संख्या में उनके अनुयायी बन रहे थे।[23] अधिकतर लोगों का इस पंथ में दीक्षित होने का एक कारण यह भी था कि गुरु जांभोजी ने सभी वर्गों और वर्णों के लोगों के लिए इस पंथ के द्वार खोल दिये थे। जांभोजी ने जाति-पाति के भेदभाव को भूलकर सभी इच्छुक लोगों को इस पंथ में दीक्षित किया, जो भी इसमें दीक्षित हुए उन सभी की एक जाति (बिश्नोई) बन गयी थी। लेकिन उनके जो गोत्र थे वे परम्परागत ही रहे थे। डॉ. कृष्णलाल बिश्नोई ने अपनी पुस्तक में लिखा है- 'जो लोग बिश्नोई बन गए थे, उनका वर्ण बदला गया था किन्तु उनके गोत्र परम्परागत ही रहे।[24]

उपर्युक्त सब मतों के अतिरिक्त जो नाम सबसे अधिक प्रचलित मान्य एवं प्रयुक्त हुआ है। वह 'बिश्नोई' है। प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में 'बीसनोई', 'वीसनोई' आदि रूपों में मिलता है। डॉ. हीरालाल माहेशवरी ने विष्णु को आधार मानकर इस संप्रदाय का नाम विषनोई रखा।[25] कुछ लोगों का मन है कि इस पंथ के बीस और नौ 29 धर्म नियम हैं तथा विष्णु की उपासना का विधान होने के कारण पंथ के लोग बिश्नोई कहलाने लगे, कुछ विद्वानों का मत है कि 'विष्णु स्नेही' होने के कारण बिश्नोई कहलाये।

ऊदोजी ने धर्म नियम सम्बन्धी दूसरे ड्योढ़े छप्पय की सातवीं पंक्ति में 'गुणतीस' ही लिखा है-

'गुणतीस धरम की आखड़ी हिरदे धरियो जोय। बीस और नौ नहीं। वील्होजी और सुरजन जी दवारा बताये गए बिश्नोई के लक्षण से इसका स्पष्ट प्रमाण मिलता है।[26]

'पहले नाव श्री विष्णु को, सिवरू सिरजनहार।
जिण ओ पंथ चलावियों, खरतर खंडाधार।।'[27]

उपर्युक्त सब मतों पर दृष्टि डालने से यह पता चलता है कि वर्तमान में सर्वाधिक प्रचलित 'बिश्नोई' है। कुछ प्राचीन हस्तलिखित प्रतियों में इसे 'बिसनोई' आदि रूपों में लिखा गया है। बिश्नोई सम्प्रदाय में गुरु जांभोजी को साक्षात विष्णु माना जाता है। इस नामकरण का आधार नि:संदेह रूप से 'विष्णु' है। जांभोजी ने एक मात्र विष्णु की उपासना पर बल दिया था। इस पंथ का मूल आधार 'विष्णु' ही है।

III. संदर्भ ग्रंथ सूची

I. जांभोजी की वाणी, सूर्यशंकर पारीक, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन-बीकानेर, 2001 पृष्ठ-41
II. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी. आर. प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-238
III. जांभोजी की वाणी, सूर्यशंकर पारीक, प्रथम संस्करण, विकास प्रकाशन-बीकानेर, 2001 पृष्ठ-41
IV. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी° आर°प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-238
V. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी° आर°प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-239
VI. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-110
VII. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-346-350
VIII. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-13-17
IX. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-107
X. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-106
XI. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली, 1996, पृष्ठ-211
XII. जम्भवाणी मूल संजीवनी व्याख्या, डॉ. किशनाराम बिश्नोई, निर्मल पब्लिकेशन, दिल्ली,

1996, पृष्ठ-109

XIII. जंभसार, आठवाँ प्रकरण, साहबराम राहड़, पृष्ठ-282

XIV. वील्होजी की वाणी, (सम्पा) कृष्णलाल बिश्नोई, संभराथल प्रकाशन, सिरसा, 1997, पृष्ठ-91

XV. जांभोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, (कथा परसिन्ध), डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण,बी. आर. प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-238

XVI. वील्होजी की वाणी, (सम्पा) कृष्ण लाल बिश्नोई, संभराथल प्रकाशन, सिरसा, 1997, पृष्ठ-93

XVII. जम्भदेव चरित्र भानु, स्वामी ब्रह्मानन्द जी, 1958, पृष्ठ-11-23

XVIII. जम्भसार, सप्तम प्रकरण, साहबराम राहड़, पृष्ठ-136

XIX. वील्होजी की वाणी, (सम्पा) कृष्णलाल बिश्नोई, संभराथल प्रकाशन, सिरसा, 1997, पृष्ठ-213

XX. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी. आर. प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-238

XXI. जांभोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी॰ आर॰प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-421

XXII. जांभोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डाo हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी. आर. प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-433,

XXIII. जाम्भोजी, विश्नोई सम्प्रदाय और साहित्य, डॉ. हीरालाल माहेश्वरी, प्रथम संस्करण, बी. आर. प्रेस-कलकता, 1970, पृष्ठ-240

XXIV. जम्भसागर, कृष्णानन्द बिश्नोई, बिश्नोई मन्दिर, ऋषिकेश, 2003, पृष्ठ-72

XXV. गुरु जांभोजी एवं बिश्नोई पंथ का इतिहास, डॉ. कृष्णलाल बिश्नोई, संभराथल प्रकाशन, सिरसा, 2000, पृष्ठ-93

XXVI. "गुरु चिन्हों पिरोहित, गुरुमुख धर्म बखाणी |" गुरु जांभोजी का प्रथम (सम्पा) कृष्णानन्द आचार्य, जम्भसागर, पृष्ठ-18

XXVII. वील्होजी की वाणी, (सम्पा) कृष्णालाल बिश्नोई, संभराथल प्रकाशन, सिरसा, 1997, पृष्ठ-4 (कथा ग्यानचरी की)